धर्म

## ज्ञान का महत्व

ज्ञान और अज्ञान में इतना ही भेद है कि बीच में एक भ्रम का परदा लगा हुआ है। जहां परदा खुल गया, अज्ञान समाप्त हो गया, ज्ञान की ज्योति जग गई, मनुष्य जो अपने आपको भूला हुआ था, होश में आ गया कि मैं कौन हूं? मेरा लक्ष्य क्या है? मैं क्या करने आया था और क्या करने लगा? मैं क्या लेकर आया था और मुझे क्या लेकर जाना है?

## सत्य वचन

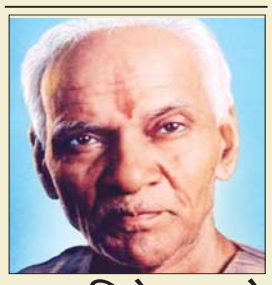



# हम विवेक को जाग्रत करें

–पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

**मानव** होने के नाते हमारा यह प्राथमिक कर्त्तव्य– है कि हम विवेक को जाग्रत करें और उसकी आवाज को सुनना सीखें। संसार के छोटे से छोटे और बड़े से बड़े सभी मनुष्य इसकी कृपा के लिए लालायित रहते हैं । इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि मनुष्य के लिए अपने विवेक की सदैव रक्षा करना परमावश्यक है । किसी स्वार्थ के लिए भी विवेक की हत्या करने से उसका कुफल भोगना पड़ता है । चाहे वैयक्तिक विषय हो और चाहे सामाजिक, चाहे राजनीतिक समस्या हो अथवा धार्मिक, हम को विवेक युक्त निर्णय का सदैव ध्यान रखना चाहिए। लकीर के फकीर बन जाने या 'बाबा वाक्य प्रमाण' मान लेने से मनुष्य की बुद्धि कुंठित हो जाती है और वह गलत मार्ग पर चलने लग जाता है । इसलिए प्राचीन या नवीन कोई भी विषय हो, हमको उसका निर्णय उचित–अनुचित,सत्य–असत्य का पूर्ण विचार करके ही करना चाहिए ।

# ऐसे होते हैं गणेश जी प्रसन्न

**सांसारिक** कामनाएं इस संसार में आए प्रत्येक व्यक्ति को होती हैं। कई कामनाओं का संबंध मूल आवश्यकता से होता है। इसी इच्छापूर्ति की प्राप्ति के लिए व्यक्ति अपनी क्षमता के अनुसार प्रयास करता है। लेकिन भौतिक प्रयत्न से भी फल नहीं मिलने पर आशा ईश्वरीय चमत्कार की ओर जाती है। जिसकी प्राप्ति तभी संभव होती है जब आपेक्षक सविधि कोई अनुष्ठान करता है। इसमें गणेशजी की साधना शीघ्र फलदायी है। इनके अनेक प्रयोग में उनको प्रिय दूर्वा के चढ़ाने की पूजा शीघ्र फलदायी और सरलतम है। इसे किसी भी शुभ दिन प्रारंभ करना चाहिए। इसे गणेशजी की प्रतिष्ठित प्रतिमा पर करें। इक्कीस दूर्वा लेकर इन नाम मंत्र द्वारा गणेशजी को गंध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप व नैवेद्य अर्पण करके एक–एक नाम पर दो–दो दूर्वा चढ़ाना चाहिए। यह क्रम प्रतिदिन जारी रखने एवं नियमित समय पर करने से जो आप चाहते हैं उसकी प्रार्थना गणेशजी से करते रहने पर वह शीघ्र पूर्ण हो जाती है। इसमें इस प्रयोग के अतिरिक्त विघ्ननायक पर श्रद्धा व विश्वास रखना चाहिए।

**गणेशजी की कृपा में ये सहायक हैं:** लाल व सिंदूरी रंग प्रिय है। दूर्वा के प्रति विशेष लगाव है। चूहा इनका वाहन है। बैठे रहना इनकी आदत है। लिखने में इनकी विशेषज्ञता है। पूर्व दिशा अच्छी लगती है। लाल रंग के पुष्प से शीघ्र खुश होते हैं। प्रथम स्मरण से कार्य को निर्विघ्न संपन्न करते हैं। दक्षिण दिशा की ओर मुंह करना पसंद नहीं है। चतुर्थी तिथि इनकी प्रिय तिथि है। स्वस्तिक इनका चिन्ह है। सिंदूर व शुद्ध घी की मालिश इनको प्रसन्न करती है। गृहस्थाश्रम के लिए ये आदर्श देवता हैं। कामना को शीघ्र पूर्ण कर देते हैं।

# भारतीय संस्कृति में यज्ञ की महिमा

**यज्ञों** की महिमा का कोई अंत नहीं। यज्ञ भारतीय संस्कृति के अनुसार ऋषि–मुनियों द्वारा जगत को दी गई ऐसी महत्वपूर्ण देन है जिसे सर्वाधिक फलदायी एवं समस्त पर्यावरण केन्द्र इको सिस्टम के ठीक बने रहने का आधार माना जा सकता है। ऋषियों ने अयं यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः (अथर्ववेद 9.15.14) कहकर यज्ञ को संसार की सृष्टि का आधार बिंदु कहा है। गीताकार श्रीकृष्ण ने कहा है

**।। सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।।**
**।। अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्ट कामधुक्?॥।।**

अर्थात् प्रजापति ब्रह्मा ने कल्प के आदि में यज्ञ सहित प्रजाओं को रचकर, उनसे कहा कि तुम लोग इस यज्ञ कर्म के द्वारा वृद्धि को प्राप्त होओ और यज्ञ तुम लोगों को इच्छित भोग प्रदान करने वाला हो।संस्कृत के यज धातु से बना यज्ञ शब्द देव पूजन, दान एवं दुनिया को समर्थ–सशक्त बनाने वाली सत्ताओं के संगतिकरण के अर्थ में परिभाषित होता है। इस प्रकार यज्ञ दिव्य प्रयोजनों के लिए संगठित रूप से अनुदान प्रस्तुत करता है। यही है वह पुण्य प्रवृत्ति, जिसके कारण नर पशु को नर–नारायण बनने का अवसर मिलता है।



अग्नि में पकाए जाने पर जिस तरह सोने की कलुषता मिटती और आभा निखरती है, उसी प्रकार यज्ञ दर्शन को अपना कर मनुष्य उत्कृष्टता के शिखर पर चढ़ता और देवत्व की ओर अग्रसर होता है। दुनिया की प्रत्येक वस्तु परिवर्तनशील है। अतः प्रकृति के सभी पदार्थ परस्पर संसर्ग से जहां बनते रहते हैं, वहां वियोग से बिगड़ते भी रहते हैं। मिट्टी के परमाणु जलादिका संसर्ग पाकर घट, मठ आदि रूपों में बन भी जाते हैं और वही मिट्टी के परमाणु अन्य किसी कारण से वियोग को प्राप्त कर घटादि के नाश का भी कारण बन जाते हैं।

इसीलिए संयोग अर्थात् पदार्थों का परस्पर संगतिकरण ही संसार की स्थिति का कारण है और वियोग विनाश का हेतु। यदि हाइड्रोजन और ऑक्सीजन का संयोग न हो तो जल नहीं बन सकता। अतः मनुष्य का कर्तव्य है कि संसार की स्थिति को बनाए रखने के लिए पदार्थों के संगतिकरण रूपी पुरुषार्थ में सदा प्रयत्नशील रहे और संगतिकरण का नाम ही यज्ञ है।

महर्षि दयानंद ने यज्ञ की महत्ता का वर्णन करते हुए एक बहुत अच्छा उदाहरण दिया है। उन्होंने लिखा है– घर में किलो भर जीरा पड़ा हुआ है। किन्तु उसकी सुगंध किसी को भी नहीं आ रही है, परन्तु घर की गृहिणी उसमें से दो ग्राम जीरा लेकर अग्नि में खूब तपे थोड़े घृत में डालकर जब दाल में बघार (छौंक) लगा देती है तो न केवल वही एक घर प्रत्युत आसपास के सभी घर उसकी सुगंध से सुगंधिमय हो जाते हैं।

हमारे शास्त्रों में उल्लेख मिलता है कि राजा दशरथ ने पुत्रेष्टि यज्ञ करके चार पुत्र पाए थे। इन्द्र ने स्वयं भी यज्ञों के द्वारा ही सब पाया था। पापों के प्रायश्चित स्वरूप अनिष्टों और प्रारब्धजन्य दुर्भाग्यों की शांति के निमित्त, किसी अभाव की पूर्ति, वायुमण्डल में से अस्वास्थ्यकर तत्वों का उन्मूलन करने के निमित्त हवन यज्ञ किए जाते थे और उनका परिणाम भी वैसा ही होता था।

इस युग में जिस प्रकार विभिन्न प्रकार की शक्तियां कोयला, जल, पेट्रोल, एटम द्वारा उत्पन्न की जा रही है, उसी प्रकार प्राचीन काल में यज्ञ कुंडों और वेदियों में अनेक रहस्यमय यंत्रों एवं विधानों द्वारा उत्पन्न की जाती थी। इस समय विविध मशीन अनेक कार्य करती है, उस समय मंत्रों और यज्ञों के संयोग से ऐसी शक्तियों का आविर्भाव होता है। आधुनिक विज्ञान मानव और पर्यावरण के बीच बिगड़ते संबंध का हल ढूंढ़ने में उलझता जा रहा है।

# भक्ति में ही शक्ति है

**जिस** मानव देह को लोग बिना भक्ति के ही खत्म कर देते हैं, उन्हें इस बात का एहसास नहीं कि भगवान ने करुणा करके उन्हें यह तन दिया है। उस शरीर को पाने के बाद उसका सही अर्थों में लोग उपयोग नहीं कर रहे हैं। उसे अगर भक्ति के मार्ग पर लगाया जाए तो वह भगवान को भी वश में करके उनकी कृपा प्राप्त की जा सकती है। जो स्वर्ग चाहते हैं, उन्हें पता नहीं कि वहां केवल भोग किया जा सकता है। स्वर्ग में रहने वाले भगवान भक्ति और कर्म नहीं कर सकते हैं। यह पुण्य लाभ तो मानव शरीर पाने से ही संभव है। मानव शरीर पाने के बाद ही कर्म करके मनुष्य को भगवान से प्रेम करने का अवसर मिलता है। इसलिए भगवान की भक्ति करनी चाहिए। 84 लाख योनियों में श्रेष्ठ मानव जीवन पाने के बाद भी जो लोग स्वर्ग पाने की इच्छा रखते हैं, वे मूर्ख हैं।कर्म इस संसार में आने वाला हर जीव करता है, मगर भगवत? आराधना और भक्ति केवल मानव तन से ही संभव है। उसके बाद भी कुछ लोग अपने कर्म और भक्ति के बाद स्वर्ग पाने की इच्छा मन में पालते हैं। उन्हें पता नहीं होता है कि जिसे वे स्वर्ग पाने का रास्ता समझते हैं, उस मानव तन को पाने के लिए देवता भी लालायित रहते हैं, क्योंकि मानव देह पाने के बाद ही भक्ति रस से मिलने वाले आनंद का अनुभव किया जा सकता है।

# ईश्वर के समीप लाता है अध्यात्म

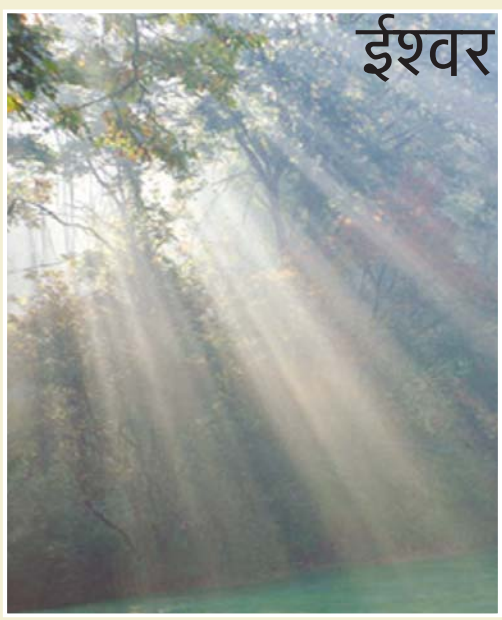



**जब** हमारे मन की तरंगें तूफानी रूप ले लेती हैं तब अध्यात्म ही इसे शांत शील में परिवर्तित कर सकता है। अध्यात्म ही सांसारिकता के बंधनों में जकड़े मनुष्य को ईश्वर की समीपता का आभास कराता है। भौतिकता से हम क्षणिक बाहरी आनंद तो आसानी से प्राप्त कर सकते हैं, पर यह स्थायी नहीं होता। अध्यात्म मनुष्य को स्थायी आंतरिक आनंद प्रदान करता है। हमारा आवश्यकता से अधिक सांसारिक होना आध्यात्मिक आनंद की अनुभूति में एक बड़ा अवरोध है। सांसारिकता में घिरे रहने से हमारे इहलोक और परलोक दोनों बिगड़ सकते हैं। सांसारिकता मनुष्य को पूर्णतः भौतिकवादी बना देती है। हालाँकि ऐसी आशंकाएँ भी व्यक्त की जाती हैं कि आध्यात्मिकता पर ज्यादा जोर देने से सांसारिक व्यवहारों में परेशानियाँ उत्पन्न हो सकती हैं, पर बुद्धिमान व्यक्ति को इसमें कोई कठिनाई नहीं आती। आध्यात्मिक होने का अर्थ यह नहीं है कि मनुष्य अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों से मुँह मोड़ ले। उसे अपने कर्तव्यों का पालन और जिम्मेदारियों का निर्वहन करते हुए आध्यात्मिक आनंद की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। हम कितना भी ज्ञान प्राप्त कर लें, पर जब तक हमें उन नियमों का ज्ञान नहीं हैं, जो मनुष्य के मनोवेग, भावनाओं और इच्छाओं पर नियंत्रण करते हैं तब तक हमारा ज्ञान अधूरा ही है। मनुष्य को बाहरी वस्तुओं में ज्यादा आनंद मिलता है, पर कुछ लोग ऐसे भी होते हैं, जो इन सबसे ऊपर उठकर सूक्ष्मतर तत्वों की प्राप्ति के लिए सतत प्रयत्नशील रहते हैं। कुछ लोगों को भोजन में आनंद मिलता है, किसी को सुंदर वस्त्रों में आनंद मिलता है तो कुछ किसी संपत्ति के स्वामित्व में सुख का अनुभव करते हैं। इन सबसे हटकर कुछ लोग ऐसे भी होते हैं, जिन्हें आध्यात्मिक चिंतन में ही परम आनंद की अनुभूति होती हैं।

मनुष्य आध्यात्मिकता के सागर में जितना गहरा उतरेगा, उसे उतने ही सुख के सीप प्राप्त होंगे। मनुष्य भौतिक सुखों की प्राप्ति के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहता है। इसके लिए वह नैतिक–अनैतिक की भी परवाह नहीं करता। उसका एक ही लक्ष्य होता है, अधिक से अधिक भौतिक सुखों को प्राप्त करना। इसके विपरीत आध्यात्मिक आनंद, जो कि जीवन का असल आनंद है, की प्राप्ति के प्रति वह इतना गंभीर नहीं होता। वह स्थायी सुख से क्षणिक सुख को ज्यादा महत्व देता है।

## जीवन मार्ग

# और कोई नहीं जीवन ही है प्रभु

अनिरुद्ध जोशी शतायु

**दुनिया** के प्रमुख नास्तिक दर्शन या धर्म में चर्वाक, जैन और बौद्ध का प्रमुख स्थान और महत्व है। सभी तरह की नास्तिक विचारधारा का उद्‍गम यही तीन धर्म हैं। नास्तिक कहने से यह आभासीत होता है कि ये धर्म ईश्वर को नहीं मानते हैं, जबकि चर्वाक को छोड़ दें तो बाकी दोनों धर्म का दृष्टिकोण इस संबंध में बिलकुल अलग है। बौद्ध धर्म ईश्वर के होने या नहीं होने पर चर्चा नहीं करता, क्योंकि यह बुद्धिजाल से ज्यादा कुछ नहीं है। उनका मानना है कि इस प्रश्न को आप तर्क या अन्य किसी भी तरह से हल नहीं कर सकते। ईश्वर के होने या नहीं होने की बहस का कोई अंत नहीं। ठीक उसी तरह कि स्वर्ग–नरक है या नहीं। मूल प्रश्न यह है कि व्यक्ति है और वह दुःख तथा बंधन में है। उसके दुःख व बंधन का मूल कारण खोजो और मुक्त हो जाओ। आष्टांगिक मार्ग पर चलकर दुःख व बंधन से मुक्त हुआ जा सकता है। यही आर्य सत्य है।जैन दर्शन अनुसार अस्तित्व या सत्ता के दो तत्व हैं– जीव और अजीव। जीव है चेतना या जिसमें चेतना है और अजीव है जड़ अर्थात जिसमें चेतना या गति का अभाव है। जीव दो तरह के होते हैं एक वे जो मुक्त हो गए और दूसरे वे जो बंधन में हैं। इस बंधन से मुक्ति का मार्ग ही कैवल्य का मार्ग है। स्वयं की इंद्रियों को जीतने वाले को जिनेंद्र या जितेंद्रिय कहते हैं। संस्कृत के जिन धातु से बने जैन शब्द का अर्थ ही यही होता है, स्वयं को जीतना। यही अरिहंतो का मार्ग है। जितेंद्रिय बनकर जीओ और जीने दो यही जिन सत्य है।

चर्वाक या लोकायत दर्शन स्पष्ट तौर पर ईश्वर के अस्तित्व को नकारते हुए कहता है कि यह काल्पनिक ज्ञान है। तत्व भी पांच नहीं चार ही हैं। आकाश के होने का सिर्फ अनुमान है और अनुमान ज्ञान नहीं होता। जो प्रत्यक्ष हो रहा है वही ज्ञान है अर्थात दिखाई देने वाले जगत से परे कोई और दूसरा जगत नहीं है। आत्मा अजर–अमर नहीं है। वेदों का ज्ञान प्रामाणिक नहीं है। यथार्थ और वर्तमान में जीयो। ईश्वर, आत्मा, स्वर्ग–नरक, नैतिकता–अनैतिकता और तमाम तरह की तार्किक और दार्शनिक बातें व्यक्ति को जीवन से दूर करती हैं। इसीलिए खाओ, पियो और मौज करो। इस जीवन का भरपूर मजा लो यही चर्वाक सत्य है। अंततः जैन और बौद्ध दर्शन की शिक्षा मुक्ति की शिक्षा है। स्वयं को जानने की शिक्षा है। सत्य और अहिंसा की शिक्षा है किंतु चर्वाक दर्शन पूरी तरह से भौतिकवादी दर्शन होने के कारण इसका भारतीय दर्शन, धर्म और समाज में कोई महत्व नहीं रहा, क्योंकि यह दर्शन आत्मा के अस्तित्व को भी नकारता है। उसकी नजर में देह ही आत्मा है और मृत्यु ही मोक्ष है। शायद यही कारण रहा कि छठी शताब्दी आते–आते इस दर्शन के मूलग्रंथ और मान्यताएँ अपना अस्तित्व खो बैठीं। इस दर्शन को भी वैदिक दर्शन जितना पुराना ही माना जाता है। कुछ लोग यह कहते और लिखते भी हैं कि बौद्ध धर्म भी आत्मा के अस्तित्व को नहीं मानता, जबकि यह गलत है। निर्वाण आत्मा को ही प्राप्त होता है किसी और को नहीं। इंद्रियविहीन शुद्ध चैतन्य इस तरह से होता है जैसे कि है ही नहीं। भगवान बुद्ध ने कहा था कि अपने दिए खुद बनो। दूसरों के दीपक से तुम्हारा दीपक कभी नहीं जल पाएगा।

# इंदौर का शनि मंदिर

**अहिल्या** नगरी इंदौर में शनिदेव का प्राचीन व चमत्कारिक मंदिर जूनी इंदौर में स्थित है। इस मंदिर के बारे में एक कथा प्रचलित है कि मंदिर के स्थान पर लगभग 300 वर्ष पूर्व एक 20 फुट ऊँचा टीला था, जहाँ वर्तमान पुजारी के पूर्वज पंडित गोपालदास तिवारी आकर ठहरे।एक रात शनिदेव ने पंडित गोपालदास को स्वप्न में दर्शन देकर कहा कि उनकी एक प्रतिमा उस टीले के अंदर दबी हुई है। शनिदेव ने पंडित गोपालदास को टीला खोदकर प्रतिमा बाहर निकालने का आदेश दिया। जब पंडित गोपालदास ने उनसे कहा कि वे दृष्टिहीन होने से इस कार्य में असमर्थ हैं, तो शनिदेव उनसे बोले– अपनी आँखें खोलो, अब तुम सब कुछ देख सकोगे। आँखें खोलने पर पंडित गोपालदास ने पाया कि उनका अंधत्व दूर हो गया है और वे सबकुछ साफ–साफ देख सकते हैं। दृष्टि पाने के बाद पंडितजी ने टीले को खोदना शुरू किया। उनकी आँखें ठीक होने की वजह से अन्य लोगों को भी उनके स्वप्न की बात पर यकीन हो गया तथा वे खुदाई में उनकी मदद करने लगे। पूरा टीला खोदने पर पंडितजी का स्वप्न सच साबित हुआ तथा उसमें से शनिदेव की एक प्रतिमा निकली। बाहर निकालकर उसकी स्थापना की गई। यही प्रतिमा आज इस मंदिर में स्थापित है। इस प्रतिमा के एक और चमत्कार की कथा प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि शनिदेव की प्रतिमा पहले वर्तमान में मंदिर में स्थापित भगवान राम की प्रतिमा के स्थान पर थी। एक शनिचरी अमावस्या पर यह प्रतिमा स्वतः अपना स्थान बदलकर इसके वर्तमान स्थान पर आ गई। तब से शनिदेव की पूजा उसी स्थान पर हो रही है और यह श्रद्धालुओं की पुरातन आस्था का केंद्र बन गया है।